International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(3): 126-128

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(3): 126-128
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 10-03-2021
Accepted: 23-04-2021

डॉ0 गीता परिहार
एसोसियेट प्रोफेसर, प्रभारी संस्कृत विभाग, गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कालेज, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

डॉ0 अंशू सरीन
एसोसियेट प्रोफेसर, प्रभारी बी0,ड0 विभाग, गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कालेज, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ0 गीता परिहार
एसोसियेट प्रोफेसर, प्रभारी संस्कृत विभाग, गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कालेज, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

कोविड–19 के परिप्रेक्ष्य में श्रीमद्भगवद्गीता का सन्देश

डॉ0 गीता परिहार एवं डॉ0 अंशू सरीन

सारांश
महर्षि वेद व्यास जी कृत महाभारत के भीष्म पर्व के पच्चीसवें अध्याय से लेकर बयालीसवें अध्याय तक भगवान श्रीकृष्ण के मुखारविन्द से निसृत 'भगवद् गीता' मानव–जाति के कल्याणार्थ एक सर्वश्रेष्ठ कृति है। इसमें मानव –मात्र के कल्याण के लिए धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का सहज समन्वय है। यह अध्यात्म विद्या को प्रकाशित करने वाली दिव्य –दीप–प्रभा है।
निस्सन्देह गीता में सभी शास्त्रों का विशेषतः उपनिषदों का सार संग्रहीत है, जिनमें ब्रह्म (परमात्मा) जीव (आत्मा) तथा माया (प्रकृति) अर्थात् जगत् का विशेष विवेचन किया गया है। इन दार्शनिक विषयों के साथ परमात्मा की प्राप्ति हेतु निष्काम कर्मयोग तथा ज्ञानयोग के साधनों के अनुपालन का अद्भुत एवं अभूतपूर्व दिव्यज्ञान भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को प्रदान किया है। सामाजिक परिस्थितियाँ जो सुखात्मक व दुःखात्मक होती हैं वे शोक करने योग्य नहीं होती है क्योंकि कहा गया है –

चक्रवत परिवर्तन्ते दुःखानि सुखानि च

मैं यहाँ यह बताना चाहती हूँ कि 'कोरोना वायरस का संक्रमण' जिसने आज विश्व का अधिकांश भाग अपनी गिरफ्त में ले रक्खा है, वह भी शोक करने योग्य नहीं हैं, अपितु अर्जुन की भाँति इस रणभूमि में हमें अपनी सही भूमिका (कर्तव्य) निभाने का समय है। इसलिए इस संक्रमण से घबराने की नहीं अपितु धैर्य एवं संयम के साथ लड़ने की आवश्यकता है। इस संक्रमण को समूलतः नष्ट करने के लिए सभी को प्रयत्नशील होना चाहिए ।
जैसाकि सर्वविदित तथ्य है कि कोरोना वर्तमान समय में वैश्विक महामारी बन चुका है परिणामतः यह भी एक सुनिश्चित तथ्य है कि मानव–जाति को इसके वैयक्तिक व सामाजिक, तात्कालिक एवं दूरगामी परिणाम झेलने पड़ेंगे । वर्तमान समय में भारतीय समाज में कोरोना के कारण न जाने कितने लोग मानसिक व्याधियों से ग्रसित हो गये हैं।
अन्त में यह कहना चाहूँगी कि आज कोरोना वायरस के कारण आये संकट में यदि मानव–जाति शोध पत्र में वर्णित स्थित प्रज्ञ की भाँति जीवन जीने का अभ्यास कर लेता है तो उसको वर्तमान स्थिति संकट प्रतीत न होकर एक सामान्य जीवन ही प्रतीत होगा।

मूल शब्दः– वैदिक, ज्ञान, व्यावहारिक, पक्ष, कोरोना वायरस

प्रस्तावना
महर्षि वेद व्यास जी कृत महाभारत के भीष्म पर्व के पच्चीसवें अध्याय से लेकर बयालीसवें अध्याय तक भगवान श्रीकृष्ण के मुखारविन्द से निसृत 'भगवद् गीता' मानव–जाति के कल्याणार्थ एक सर्वश्रेष्ठ कृति है। इसमें मानव –मात्र के कल्याण के लिए धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का सहज समन्वय है। यह अध्यात्म विद्या को प्रकाशित करने वाली दिव्य –दीप–प्रभा है। इसका निष्काम कर्म योग का दर्शन मानव जाति के लिए विलक्षण प्रदेय है। इसमें मानव – मात्र के कल्याण के लिए योग के विविध रूपों का निसर्ग प्रतिपादन हुआ है।
निस्सन्देह गीता में सभी शास्त्रों का विशेषतः उपनिषदों का सार संग्रहीत है, जिनमें ब्रह्म (परमात्मा) जीव (आत्मा) तथा माया (प्रकृति) अर्थात् जगत् का विशेष विवेचन किया गया है। इन दार्शनिक विषयों के साथ परमात्मा की प्राप्ति हेतु निष्काम कर्मयोग तथा ज्ञानयोग के साधनों के अनुपालन का अद्भुत एवं अभूतपूर्व दिव्यज्ञान भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को प्रदान किया है। महाभारत के रचयिता ब्रह्मर्षि वेदव्यास जी ने स्वयं निम्नलिखित श्लोक में अपनी काव्यमयी आलंकारिक भाषा में अति सुन्दर वर्णन किया है –

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपाल नन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता, दुग्धंगीतामृतम् महतः ।।

भगवद्गीता में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा है–

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ।।

अर्थात् जन्मे हुए कि मृत्यु निश्चित है और मरे हुए का जन्म निश्चित है। ये अपरिहार्य स्थिति वाले विषय शोक करने योग्य नहीं होते हैं, ठीक इसी प्रकार सामाजिक परिस्थितियाँ जो सुखात्मक व दुःखात्मक होती हैं वे शोक करने योग्य नहीं होती है क्योंकि कहा गया है –

चक्रवत परिवर्तन्ते दुःखानि सुखानि च

मैं यहाँ यह बताना चाहती हूँ कि 'कोरोना वायरस का संक्रमण' जिसने आज विश्व का अधिकांश भाग अपनी गिरफ्त में ले रक्खा है, वह भी शोक करने योग्य नहीं हैं, अपितु अर्जुन की भाँति इस रणभूमि में हमें अपनी सही भूमिका (कर्तव्य) निभाने का समय है। इसलिए इस संक्रमण से घबराने की नहीं अपितु धैर्य एवं संयम के साथ लड़ने की आवश्यकता है। इस संक्रमण को समूलतः नष्ट करने के लिए सभी को प्रयत्नशील होना चाहिए ।
जैसाकि सर्वविदित तथ्य है कि कोरोना वर्तमान समय में वैश्विक महामारी बन चुका है परिणामतः यह भी एक सुनिश्चित तथ्य है कि मानव–जाति को इसके वैयक्तिक व सामाजिक, तात्कालिक एवं दूरगामी परिणाम झेलने पड़ेंगे । वर्तमान समय में भारतीय समाज में कोरोना के कारण न जाने कितने लोग मानसिक व्याधियों से ग्रसित हो गये हैं। आये दिन अनिद्रा, कुण्ठा, चिन्ता, अवसाद तथा अशान्ति जैसे मनोविकारों से ग्रसित लोग चिकित्सकों के पास पहुँच रहे हैं। पारिवारिक – कलह भी इन दिनों में बढ़ी है। एक अप्रत्यक्ष भय मानव जाति में व्याप्त हो गया है। निस्सन्देह रूप से मैं यह कह सकती हूँ कि यदि इस विपत्काल में हमारे समाज में लोगों को गीता – दर्शन समझाया जाय तो उपर्युक्त परिस्थितियाँ का उनके ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, क्योंकि गीता का उपदेश भी अर्जुन को लगभग इसी प्रकार की स्थिति में दिया गया था। एक श्रेष्ठ धनुर्धारी अर्जुन, जिसकी प्रत्यंचा की टंकार मात्र से बड़े – बड़े योद्धा भयभीत हो जाते थे वह मोहवश कापर्ण्य दोष से मोहित व भ्रमित हो जाता है। तभी भगवान् श्रीकृष्ण उसको समझाते हुए कहते हैं –

अशोच्यानन्वशोचस्तवं प्रज्ञावादांश्चभाषसे ।
गतासूनगतासूञ्च नानुशोचन्ति पण्डितः ।।[1]

उपर्युक्त श्लोक में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन के माध्यम से यह बताया है कि मानव को शोक व चिन्ता नहीं करना चाहिए। अपितु निष्काम भाव से करणीय कर्मों को करते हुए स्थिर बुद्धि होकर कार्य करते रहना चाहिए । स्थितप्रज्ञ के विषय में लिखा है –

प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थ मनोगतान् ।
आत्मन्येवात्मना तुष्ट स्थित प्रज्ञस्तदोच्यते ।।[2]

अर्थात् मनुष्य मन में स्थित सम्पूर्ण कामनाओं को त्याग देता है और आत्मा से आत्मा में संतुष्ट रहता है, तब वह स्थिर बुद्धि वाला व्यक्ति कहा जाता है। वस्तुतः मानव अनेक अभिलाषाओं और कामनाओं से प्रेरित होकर कार्य करता है तथा उनकी पूर्ति होने पर अथवा न होने पर प्रतिक्रिया भी करता है, जिन्हें हर्ष, दुःख, सुखादि रूप में परिभाषित किया जाता है, किन्तु मनुष्य जब इनसे परांगमुख हो जाता है, सभी अवस्थाओं में तटस्थ रहता है, तभी वह स्थिर बुद्धि पुरुष कहलाता है जैसाकि श्रीकृष्ण ने कहा है–

दुखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहा ।
वीतराग भय क्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ।।[3]

अर्थात् जो दुःखों की प्राप्ति पर उद्वेलित नहीं होता और सुखों के प्राप्ति की स्पृहा जिसके अन्दर नहीं रहती है, जिसके राग, भय तथा क्रोधादि संवेग नष्ट हो चुके होते हैं, वही स्थिर बुद्धि कहा जाता है। दुखों व सुखों के प्रति ऐसे पुरुष का दृष्टिकोण सामान्य पुरुष से भिन्न होता है। वह दोनों स्थितियों में सम रहता है।
यही नहीं सामान्य व्यक्ति की चेतना कर्त्तव्य–बोध से बोझिल रहती है, इसलिए वह अपनी उपलब्धियों पर यह मानने लगता है कि वह कितना भाग्यशाली, सक्षम और सफल है जबकि वस्तुतः इस तरह का भाव उसके अविवेक का ही परिणाम होता है। विवेकी व्यक्ति तो सच्चाई से अवगत होता है और वह इस तरह की प्रतिक्रियाओं से सर्वथा रहित होता है जैसाकि भगवद्गीता में लिखा है–

यः सर्वत्रानभिस्नेह स्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।
नाभिनन्दति नद्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ।।[4]

जो पुरुष सर्वत्र स्नेह रहित रहता है शुभाशुभ प्राप्त होने पर न प्रसन्न होता है न द्वेष करता है उसकी बुद्धि स्थिर होती है। ऐसे पुरुष का मन सभी बातों में निसंग रहता है। सुख–दुःख के मूल में अहम् भूमिका इन्द्रियों की होती है और ऐसे पुरुष की इन्द्रियाँ सहज उसके वशीभूत होती हैं वह पुरुष अपनी इन्द्रियों को इन्द्रिय सम्बन्धी भौतिक जगत् के विषयों से पूर्णतया समेटकर अपनी बुद्धि में स्थिर कर

लेता है ऐसे पुरुष की स्थिति को श्रीकृष्ण ने एक दृष्टान्त के द्वारा समझाने की कोशिश की है –

यदा संहरते चायं कूर्मोऽगानिव सर्वशः ।
इन्द्रयाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ।।[5]

अर्थात् जैसे कछुआ अपने सभी अंगों को सब ओर से समेटकर अपने अन्दर नियन्त्रित कर लेता है उसी तरह स्थित प्रज्ञ पुरुष शब्द रूप रस गन्धादि विषयों से इन्द्रियों को विमुख कर अपने में नियन्त्रित कर लेता है। इसके विपरीत जिनकी इन्द्रियाँ संयमित नहीं होती हैं उनकी तुलना एक नाव से करते हुए श्रीकृष्ण लिखते हैं –

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते ।
तदस्य हरति प्रज्ञा वायुनावमिवाम्भसि ।।[6]

जब मन अनियन्त्रित इन्द्रियों के पीछे भागता है, तब वह व्यक्ति की बुद्धि को उसी प्रकार हर लेता है, जिस प्रकार जल में चलने वाली नाव को शक्तिशाली पवन अपनी दिशा में उसको बहाने लगता है। इसके विपरीत स्थितप्रज्ञ पुरुष की स्थिति एक समुद्र के समान होती है जो समस्त नदियों रुपी विषयों को अपने अन्दर समेट लेता है और मर्यादा को भी नहीं तोड़ता है। ऐसे व्यक्ति को ही सच्ची शान्ति की प्राप्ति होती है, सांसारिक विषयों की कामना करने वाले को नहीं –

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठ ।
समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत् ।।
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे ।
सशान्तिमाप्नोति न कामकामी ।।[7]

एक अन्य सन्दर्भ में इसी बात को भगवद्गीता में श्रीकृष्ण प्रकारान्तर से कहते हैं –

विषया विनवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः ।
रसवर्जं रसोऽस्य परं दृष्टवा निवर्तते ।।[8]

अर्थात् आहार न लेने वाले (इन्द्रियों के द्वारा विषयों को ग्रहण न करने वाले) पुरुष के केवल विषय ही निवृत्त होता है किन्तु स्थित प्रज्ञ पुरुष का परमात्मा के दर्शन हो जाने पर राग अर्थात् आसक्ति भी निवृत्त हो जाती है। कहने का आशय है कि ब्रह्म की अनुभूति हो जाने पर इन्द्रियाँ तथा मन स्वयं शांत हो जाते हैं और इन्द्रियों का दमन न करने वाले व्यक्ति के मन को ये प्रबल इन्द्रियाँ बलात् हर लेती हैं[9], परन्तु जिस व्यक्ति के अन्दर विषय की ओर बढ़ने की सहज प्रवृत्ति ही शान्त हो जाती है तब उस व्यक्ति की बुद्धि पूर्णरूपेण स्थिर मानी जाती है। अन्यथा व्यक्ति इन्द्रियों को तो नियन्त्रित किया हुआ दिखाता है और मन से विषयों का उपभोग करता रहता है। ऐसे लोगों को भगवद्गीता मिथ्याचरण करने वाला कहता है।[10] विषयों से पूर्णरूपेण परांगमुख न होने पर मन का कितना सुन्दर चित्र भगवद्गीता में खींचा गया है –

ध्यायतो विषयान्पुंसः संगतस्तेषूपजायते ।
संगात्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ।।
क्रोधाद्भवति संमोह संमोहात्स्मृति विभ्रमः ।
स्मृति भ्रंशाद बुद्धि नाशो बुद्धि नाशात् प्रणश्यति ।।[11]

स्पष्ट है कि विषयों का चिन्तन करने वाले व्यक्ति की विषयों में आसक्ति बढ़ती है और आसक्ति से काम और काम से क्रोध की उत्पत्ति होती है। क्रोध से अज्ञान और अज्ञान से स्मरण शक्ति भ्रमित हो जाती है और स्मृति के भ्रमित होने से बुद्धि अर्थात् ज्ञानशक्ति का विनाश हो जाता है और बुद्धि के नष्ट होने से वह पुरुष अपने श्रेय साधन से च्युत हो जाता है। इसके विपरीत जो अपने इन्द्रियों को वश में रखते हुए, प्रेम और द्वेष से मुक्त रहकर इन्द्रियों के विषय में विचरण करते हुए भी प्रसन्न रहता है। चित्त के प्रसन्न रहने पर उसके सभी दुःखों का नाश हो जाता है, क्योंकि जिसका चित्त प्रसन्न रहता है, उसकी बुद्धि तत्काल स्थिर हो जाती है।[12] स्थितप्रज्ञ कर्मों का त्याग नहीं करता है अपितु फल प्राप्ति की कामना का त्याग करता है वह निष्काम भाव से संसार के समस्त करणीय कर्मों को करना लोक संग्रह के लिए आवश्यक मानता है। स्थितप्रज्ञ का एक महत्वपूर्ण रूप हमें इन पंक्तियों में प्राप्त होता है–

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति ।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ।।[13]

निष्कर्ष रूप में मैं अन्त में यह कहना चाहूँगी कि आज कोरोना वायरस के कारण आये संकट में यदि मानव–जाति उपर्युक्त वर्णित स्थित प्रज्ञ की भाँति जीवन जीने का अभ्यास कर लेता है तो उसको वर्तमान स्थिति संकट प्रतीत न होकर एक सामान्य जीवन ही प्रतीत होगा। आज लॉकडाउन के कारण न जाने कितने लोगों को आत्म नियंत्रण करना कठिन हो रहा है यदि पहले से ही अपनी इन्द्रियों को नियन्त्रित करके भौतिक सुखों के पीछे न दौड़े और निष्काम भाव से सभी कर्मो को करते रहें तो आज अवसाद, भय, कुण्ठा, चिन्ता तथा अनिद्रा जैसी स्थितियों का कभी भी सामना नही करना पड़ेगा ।

संदर्भ

1. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 11
2. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 55
3. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 56
4. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 57
5. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 58
6. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 67
7. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 70
8. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 59
9. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 60
10. भगवद्गीता अध्याय 3, पृ0 6
11. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 62–63
12. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 64–65
13. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 69
14. भगवद्गीता अध्याय 2, पृ0 11